I J C R M

International Journal of Contemporary Research In Multidisciplinary

Review Article

प्राचीन भारत में उत्तराधिकार का सिद्धांत, एक समाजाास्त्रीय विवेचन

देवेन्द्र कुमार पाठक

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जवाहर लाल नेहरु स्मा0 महाविद्यालय, महराजगंज, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author: * देवेन्द्र कुमार पाठक

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.14283476

सारांश

प्राचीन भारतीय समाज में उत्तराधिकार एक महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ चिंतन का विषय रहा है। समाज में संपत्ति और अधिकारों के स्वामित्व से जुड़े उत्तराधिकार के नियमों का निर्धारण भारतीय सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संतुलन बनाए रखने के लिए किया गया था। जब किसी व्यक्ति की मृत्यु होती, तो उसकी संपत्ति का अधिकार उसके निकटतम रिश्तेदारों या सन्तान को प्राप्त होता था। यदि मृतक ने वसीयत नहीं छोड़ी होती, तो उत्तराधिकारी के रूप में परिवार के सदस्य, जैसे पुत्र, पत्नी या अन्य रिश्तेदार स्वामित्व प्राप्त करते थे। राजतंत्र में भी उत्तराधिकार का सिद्धांत लागू था, जहां राजा का पद अक्सर वंशानुगत होता था। यदि राजा का ज्येष्ठ पुत्र अयोग्य होता, तो छोटे भाई या अन्य रिश्तेदार को उत्तराधिकारी बनाया जाता। भारतीय समाज चिंतकों ने इस प्रक्रिया को व्यवस्थित और धर्मनिष्ठ बनाने के लिए मर्यादित आचरण के भी नियम निर्धारित किए थे। समाज में उत्तराधिकार को लेकर जो व्यवस्थाएँ बनाई गईं, वे प्राचीन काल से लेकर अब तक सामाजिक और राजनीतिक संरचनाओं को प्रभावित करती रही हैं। भारतीय समाज और राजनीति में वंशवाद के सिद्धांत का प्रभाव आज भी देखा जा सकता है, खासकर लोकतांत्रिक व्यवस्था में जहां परिवारों और राजनैतिक दलों में उत्तराधिकार के नियम चलते हैं। इस प्रकार, उत्तराधिकार के सिद्धांतों का समाज और राज्य के संचालन में महत्वपूर्ण योगदान रहा है, और ये सिद्धांत समय के साथ परिवर्तित होते हुए भी अपने मूल उद्देश्य को बनाए रखते हैं।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2583-7397
- **Received:** 25-08-2024
- **Accepted:** 29-09-2024
- **Published:** 04-12-2024
- **IJCRM:**3(6); 2024: 118-120
- **©2024, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Manuscript

देवेन्द्र कुमार पाठक. प्राचीन भारत में उत्तराधिकार का सिद्धांत, एक समाजाास्त्रीय विवेचन. International Journal of Contemporary Research in Multidisciplinary.2024; 3(6):118-120.

कूटशब्द: राजनीतिक संतुलन, भारतीय समाज चिंतन, उत्तराधिकार, राजतंत्रात्मक

प्रस्तावना

प्राचीन भारतीय सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था सम्बन्धी चिन्तनों में उत्तराधिकार एक अनिवार्य एवं श्रेष्ठ चिन्तन का करण रहा है। समाज में संपत्ति के स्वामित्व के सम्बन्ध में त्येक जाति, धर्म, व्यक्ति और परिवार के अस्तित्व से जुड़ा तथ्य उत्तराधिकार ही रहा है। संपत्ति के मालिक के अभाव/मृत्यु के अनन्तर उसकी संपत्ति का किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था को अधिकार हस्तान्तरित करने के लिए क्या व्यवस्था दान की जाए? इस विषय में भारतीय प्राच्य समाज चिन्तकों ने सर्व कारेण विचार कर समय-समय पर विश्लेषित व्यवस्थायें दान किया है, जिससे सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक सन्तुलन बना रहा। उत्तराधिकार का तात्पर्य है-किसी भी संपत्ति के मालिक के निधन हो जाने के अनन्तर उसके द्वारा पूर्व में ही किसी दान पत्र हिब्बा अथवा वसीयतनामा न लिखे जाने की स्थिति में उस मृत व्यक्ति की सन्तान अथवा निकटन सम्बन्धी द्वारा स्वामित्व का अधिकार प्राप्त कर उस संपत्ति पर स्थानापन्न हो जाना ही उत्तराधिकार **Succession** कहलाता है। इसी के पर्याय के रूप में अंग्रेजी का इन्हेरिटेन्स **Inheritance** शब्द भी है, जिसका शाब्दिक अर्थ है-जन्म प्राप्त करने के साथ ही साथ पैतृक संपत्ति पर उत्तराधिकार की प्राप्ति। इसी अनुम

© 2024 देवेन्द्र कुमार पाठक. This is an open access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

में राज्य के उत्तराधिकारी राजा का भी निश्चयन किया जाता रहा है। जिसके सम्बन्ध में प्राच्य समाज चिन्तकों एवं राजनीति विचारकों ने मानव समाज की रक्षा के लिए तर्कपूर्ण निर्धारण किया है। प्राचीन भारतीय समाज की सुरक्षा एवं शान्ति व्यवस्था में हेतु अस्तित्व में आए ायः सभी राजतंत्रात्मक सरकारों में राजा का पद आनुवंशिक ही था किन्तु कतिपय अपवादों को छोड़कर जिनमें विजय एवं निर्वाचन को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। राजतन्त्र के राजा का पद ज्येष्ठ पुत्र को ही प्राप्तव्य निश्चित रहा। इसे ही उत्तराधिकार में सम्पूर्ण राज्यश एवं संपत्ति राजा पिता की मृत्यु के अनन्तर प्राप्त होती रही। यद्यपि इसी व्यवस्था में युवराज के छोटे भाइयों द्वारा उत्तराधिकार की निश्चित इस व्यवस्था के उल्लंघन भी होते रहे। इसी व्यवस्था में यह भी विकल्प निर्धारित रहा है कि यदि राजा का ज्येष्ठ पुत्र अंधा, पागल, नपुंसक एवं कुष्ट रोगी होने से असमर्थ हो तो उसके बाद उसका छोटा भाई उत्तराधिकारी होता था । इससे भारतीय राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक एवं वैयकि स्थितिया सन्नियन्त्रित एवं समाजोपयोगी बनती रही। नीतिकारों ने इससे भी आगे के विकल्प विहित किए है. जिसमें उत्तराधिकारी सिद्ध किया है। शुाचार्य ने उत्तराधिकार की व्यवस्था के विषय में एक कदम आगे बढ़कर बड़ी ही व्यावहारिक व्यवस्था दान की हैं कि राजा के औरस पुत्र के अभाव अथवा अयोग्य होने की स्थिति में उसके चाचा राजा के भाई को प्राथमिकता दान की जाय। साथ ही उसके भी अभाव या अनुपयु स्थिति होने पर उसके पुत्र को इसके अभाव या अनुपयुता में दौहित्र नाती को, इसके भी अभाव अनुयु होने की स्थिति मे भान्जा को उत्तराधिकार देश माना है। समाज के संचालन एवं पालन हेतु राजनीतिक विचारकों ने दाक पुत्र को भी उत्तराधिकार दान किए जाने की उपव्यवस्था सुनिश्चित की है। इसी सन्दर्भ में राजा के परिवार में पुत्र के अभाव या अक्षम होने पर चाचा को तथा उसके भी अभाव अनुपयुता में राजा के अनुज पुत्र को भी अधिकार सम्पन्न किया गया है। मनु और याज्ञवल्क्य ने भी इस तथ्य को उद्घाटित किया है।'' व्यवहार मयूख नाम ग्रन्थ के रचयिता ने भी उत्तराधिकार के मों का निर्धारण करते हुए अग्रलिखित रूप में अनुमित किया है जिसमें क्रमशः -

1. सगा चाचा,
2. सगे भाई का पुत्र,
3. गोत्रज,
4. बहन,
5. पितामह एवं सौतेला भाई,
6. तितामहा ज्ञातव्य है कि चाचा तथा सौतेले भाई की पुत्री आदि के दाय भाग की प्राप्ति के तारतम्य में प्राथमिकता से पुत्र, पौत्र, पौत्र, पत्नी, दुहिता, दौहित्र नाती पिता, माता. सहोदर भाई. सौतेला भाई, सगे भाई का पुत्र तथा सौतेल भाई का पुत्र निर्धारित है।

प्राच्य भारतीय सामाजिक चिन्तकों ने उत्तराधिकार प्राप्त व्यक्ति द्वारा मर्यादित एव समाजोपयोगी आचरण किए जाने के भी नियम निर्धारण किए हैं। मदान्ध होकर अत्याचार न करने, अपने कुलधर्म का पालन करने, श्रेष्ठ जनों, गुरुजनों का आदर करने के साथ ही किसी को भी क्लेश न देने के निर्देशों का पालन करना निश्चित किया गया है। सत्कर्मो के ति सचेष्ट होकर सद्गुणों को धारण करते रहने के निर्देश दिए गए हैं। क्योकि इनके पालनकर्त्ता के वश में समाज के हर वर्ग, वर्ण, जाति, धर्म, सम्दाय एव कबील के लोग हो जाते हैं। 19

यह भी ज्ञातव्य है कि उत्तराधिकार की प्राच्य भारतीय परम्परा का पल्लवन वैदिक कालीन ऋषियों के समाज चिन्तनों से ारम्भ होकर आज तक वह यत्किंचित् संशोधनों, परिवर्तनों एवं नूतन नियम विधानों के साथ समाज का संचालन कर रही है। यह तथ्य अवश्य उल्लेखनीय है कि वर्तमान समाज एवं राज्य की स्थितियों में पूर्व की अपेक्षा अब और अधिक परिवर्तन आ चुके है। समाज का वैश्वीत रूप होता जा रहा है। राज्य और सरकारों के स्वरूप और वैशिष्ट में भूत परिवर्तन आ चुके हैं। राजा शासन प्रणाली के स्थान को लगभग पूरे विश्व स्तर पर प्राप्त कर लिया है। रोज का अब कोई अस्तित्व समाज नहीं स्वीकारता है। जनतन्त्रात्मक शासन राजा का बोलबाला है किन्तु भारतीय समाज मे प्राचीन काल से राजसाा के कार्यव्यवहार एवं नियम से त्येक व्यक्तिपरिवार और सामाजिक जीवन विधि विधान गति एवं निचरित होते रहे है। यही कारण है कि राजा का व्यवहार जैसा होगा समाज मे पक्षा से भी उसी व्यवहार का अनुवर्तन निश्चित होगा। क्योंकि कहा गया है वि राजान अनुवर्तन्ते यथा राजा तथा जा । राजतन्त्र का राजा अथवा जातन्त्र का नेता पधानमंत्री राष्टपति आदि जैसा व्यवहार करेगा, वैसा ही अनुकरण जनता समाज में भी किया जायेगा। राजतन्त्रात्मक शासन प्रणाली में जानुर राजा की सामाजिक एवं राजनीतिक स्वीति की श्रेष्ठता के परिणामस्वरूप उसके उत्तराधिकारी सन्तान के ति भी भावात्मक सामाजिक स्वीति स्वतः जनता में उत्पन्न हो जाती है। परिणामतः वहीं पर वंशवाद के भाव को भी जनमानस में स्थान प्राप्त हो जाता है। उत्तराधिकार सिद्धान्त के तिफलन से ही यह पुष्टि प्राप्त कर समाज और राज्य को भावित करता है। वंशवाद की उत्पाि में इसे भी एक घटक के रूप में देखा जा सकता। है। क्योंकि विश्व के अनेक देशों की शासन साा में इसे कार्यरूप में परिणत होता हुआ देखा जा रहा है। जातान्त्रिक देशों में भी यह भाव समाज में स्वतः उद्भूत हो जा रहा है। उदाहरण के रूप में वर्तमान भारतीय लोकतन्त्र में पं0 जवाहर लाल नेहरू, श्रीमती इन्दिरा गांधी, राजीव गांधी, सोनिया गांधी, राहुल गांधी, मेनका गांधी, वरुण गांधी, आदि श्रेष्ठ पदों पर उत्तराधिकार नियमों के परिवर्तित रूप में जनता की सहज स्वीति से आसीन हो सके। उार देश की समकालीन राजनीति के मुलायम सिंह यादव का परिवार मध्य देश का शुक्ल रविशंकर शुक्ल परिवार हरियाणा का देवीलाल परिवार और बिहार का लालू यादव और राजस्थान में सिंधिया परिवार भी उत्तराधिकार के सिद्धान्त की सामाजिक स्वीति की देन है, जो जनतन्त्र के लिए उपयु न होने पर भी भारतीय राजनीतिक समाज में अपनी स्थापना प्राप्त कर सके हैं। इसके पीछे सहज रूप में सामाजिक स्वीति ही कारण कही जा सकती हैं। क्योंकि जब एक व्यक्तिअपने कार्य व्यवहार एवं परिश्रम से समाज में राजनीति में अथवा किसी भी क्षेत्र में गति प्राप्त कर तिष्ठित हो जाता है, तो उसे समाज सरलतया अपना लेता है। उसकी अनुगामिता में समाज चलनशील बन जाता है। तभी से सामाजिक जनों में उसके अनन्तर के उसके उत्तराधिकारी की खोज भी ारम्भ हो जाती है। जैसे भारतीय लोकतन्त्र में इन्दिरा गांधी की स्थिति के पश्चात् राजीव और उनके पश्चात् यिंका गांधी के ति लोक चाह पैदा हो गयी थी। जिसका सम्यक रूप से समाज वैज्ञानिक विवेचन करने यह तथ्य उगर कर हमारे समक्ष उपस्थित होता है कि यह प्राच्य भारतीय उाराधि कार के सिद्धान्त की अवधारणाओं का ही तिफलन अनेकशः परिवर्धनों और परिवर्तनों के साथ नूतन समाज में आज भी विद्यमान है। न केवल राजनीतिक समाज के अन्तर्गत अपितु धर्म, व्यवसाय, शिक्षा तथा उद्योग जगत में भी यह व्याप्त है। सामाजिक

© 2024 देवेन्द्र कुमार पाठक. This is an open access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

मनःस्थिति का सदैव संचालन करता हुआ उत्तराधिकार का सिद्धान्त आज भले ही अनेक विध रूपों में रूपायित है, किन्तु उसका ातिक स्वरूप अपने अस्तित्व को स्थापित किए हुए है देश की राजनीति व्यवस्थाय समाज संचालन की व्यवस्था, परिवार और व्यक्तिकी हिस्सेदारी और उसके दायभाग की सुनिश्चिता हमारे पूर्व जन्मा सामाजिक बिन्तकों के उत्तराधिकार सिद्धान्त के चिन्तन की ही देन है।

निष्कर्ष

उपरि विवेचित तथ्यों के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्राच्य भारतीय समाज एवं राजनीति के चिन्तक ऋषियोंः मुनियों, साधु-सन्तों, शिक्षाविदों एवं नीतिकारों ने जिस उत्तराधिकार सिद्धान्त का तिपादन किया है, वह समय एवं परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित एवं परिवर्धित अवश्य हुआ है, किन्तु उसका भाव, उसकी स्वीति तथा उसका अनुपालन भारतीय समाज में आज भी होता आ रहा है। हमारा समाज उस सिद्धान्त के अनुरूप आचरण कर संयमित रूप में स्चालित होता रहा है। इसके अस्तित्व को भारतीय समाज द्वारा अन्ततः पूर्ण रूप से अस्वीत नहीं किया जा सकता। भले ही इसका स्वरूप परिवर्तित क्यों न होता रहे।

संदर्भ

1. शतपथ ब्राह्मण- 19.9.3.1-3 - सायण भाष्य सहित, वेंकटेश्वर एजेंसी, बम्बई – 1940 एवं हिंदी अनुवाद सुधाकर मालवीय, चैखम्भा प्रकाशन, वाराणसी।
2. ऋग्वेद संहिता 1.5.6- मैक्स मूलर संपादित- सायण भाष्य सहित, चैखम्भा, वाराणसी-1996, तैत्तिरीय संहिता - 5.2.7- सायण भाष्योपेत, आनंदाश्रम, पूना प्रकाशन-1908। ऐतरेय ब्राह्मण- 19.4- आनंदाश्रम मठ, पूना-1996।
3. ऋग्वेद संहिता-10.9, निरुक्त 2.10, महाभारत सभापर्व, 67.8, गीता से गोरखपुर सन 2017। वाल्मीकि रामायण- 2.3.40. 2.10.36. 8.101। गीता से गोरखपुर- 1980। मनुस्मृति 9.109, अर्थशास्त्र- 1.17.54 वाचस्पति गैरोला, चैखम्भा विद्या भवन, वाराणसी-2003।
4. कौटिलीय अर्थशास्त्र- 1.17.52-53- वाचस्पति गैरोला, वाराणसी-1975।
5. शुनीति 1.342-43, 2.15-16- अनुवादक - जगदीश चंद्र मिश्र, चैखम्भा सुरभारती, वाराणसी-2002।
6. यही 2.32-34।
7. वही-2.15-16।
8. मनुस्मृति - 9.137-कुल्लूक भट्ट, मुंबई, 1913।
9. शुनीति- 2.35-45, कामंदकीय नीतिसार- 1.25-68 सं. ज्वाला साद मिश्र, खेमराज शनिदास, वेंकटेश्वर एजेंसी, बम्बई- 1952।
10. वही-2.50-52।

Creative Commons (CC) License

This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

© 2024 देवेन्द्र कुमार पाठक. This is an open access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND). https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/